

हिन्दी सूफी साहित्य में प्रेम के विविध पक्ष

डॉ. अमनदीप कौर

सहायक प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, गुरु नानक ग्लर्स कॉलेज, संतपुरा, यमुनानगर

सारांश

हिन्दी सूफी साहित्य में प्रेम को जीवन और साधना का मूल आधार माना गया है। सूफी साहित्य में प्रेम केवल एक भावनात्मक अनुभव नहीं, बल्कि आत्मा की परम सत्य की ओर यात्रा है। यह प्रेम इश्क-ए-मजाजी से आरम्भ होकर इश्क-ए-हकीकी के रूप में विकसित होता है। सूफी कवियों जैसे मलिक मुहम्मद जायसी, कुतुबन और मंझन ने प्रेम को आत्मा और परमात्मा के मिलन का माध्यम बताया है। इस साहित्य में विरह की वेदना, मिलन का आनन्द, त्याग, समर्पण की साधना और मानवतावादी दृष्टि के माध्यम से प्रेम के विविध रूपों का चित्रण मिलता है। सूफी प्रेम सीमाओं को तोड़कर मानवता, सहिष्णुता और एकता का संदेश देता है। सूफी साहित्य में विरह को विशेष महत्व दिया गया है, क्योंकि विरह की पीड़ा आत्मा को शुद्ध करती है और उसे परमात्मा से मिलन के लिए प्रेरित करती है। वहीं मिलन को आनन्द और आत्मिक एकता का प्रतीक माना गया है। इस प्रेम में त्याग, समर्पण और अहंकार का विसर्जन आवश्यक है। सूफी प्रेम का स्वरूप अत्यन्त व्यापक और मानवतावादी है, जो जाति, धर्म और सामाजिक भेदभाव को समाप्त कर समस्त समाज को एक सूत्र में बाँधता है। इस प्रकार हिन्दी सूफी साहित्य में प्रेम एक साधना, एक दर्शन और एक जीवन-मूल्य के रूप में स्थापित होता है, जो मनुष्य को सत्य, शान्ति और ईश्वर की ओर अग्रसर करता है।

विशिष्ट शब्द: इश्क-ए-हकीकी, इश्क-ए-मजाजी, आत्मा-परमात्मा, सूफी साधना, त्याग, समर्पण, विरह, मिलन, मानवतावाद।

प्रस्तावना:-

हिन्दी साहित्य की प्रेमाख्यान परम्परा में सूफी प्रेमाख्यानों का महत्वपूर्ण स्थान है। हिन्दी साहित्य में सूफी साहित्य का समय लगभग चौदहवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी के मध्य माना गया है। सूफी साहित्य परम्परा को विभिन्न विद्वानों ने अनेक नामों से पुकारा है, जैसे- प्रेममार्गी शाखा, प्रेम काव्य, प्रेम कथानक काव्य, प्रेमाख्यान काव्य, सूफी काव्य आदि। इन नामों से यह ज्ञात होता है कि इस साहित्य परम्परा में प्रेम तत्त्व की प्रधानता है। सूफियों का प्रेम तत्त्व परम्परागत भारतीय श्रृंगार भावना से थोड़ा भिन्न है। सामान्य श्रृंगार विषयक साहित्य में विवाह, दाम्पत्य एवं सामाजिक जीवन की मर्यादाओं को स्वीकार करने वाले पारिवारिक प्रेम का चित्रण किया जाता रहा है। लेकिन सूफी साहित्य में प्रेम के शुद्ध स्वच्छन्दतापूर्ण दृष्टिकोण, सौन्दर्य भावना, साहसपूर्ण क्रिया-कलाप एवं समाज-विमुख प्रणय भावना का चित्रण हुआ है। इस प्रवृत्ति को विश्व साहित्य में 'रोमांस' अर्थात् 'स्वच्छन्द प्रेम' कहा जाता है। जब कोई भी समाज परम्पराओं, रूढ़ियों और मर्यादाओं से अत्यधिक जकड़ जाता है, तब उसकी प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप स्वच्छन्दता या उन्मुक्तता का आना स्वाभाविक है। इसी के परिणामस्वरूप विभिन्न भाषाओं के साहित्य में स्वच्छन्द प्रेम की प्रवृत्तियों का चित्रण होता रहा है। हिन्दी के मध्यकालीन प्रेमाख्यानक साहित्य को भी विश्व के इसी रोमांस साहित्य की एक शाखा के रूप में देखना चाहिए। सूफी साहित्य परम्परा की शुरुआत सन् 1370 ई० में मुल्ला दाऊद के 'चंदायन' से होती है। इस धारा के प्रमुख कवि मलिक मुहम्मद जायसी हैं। जायसी के अतिरिक्त कुतुबन (मृगावती), मंझन (मधुमालती), उस्मान (चित्रावली), कासिमशाह (हंस जवाहिर) आदि महत्वपूर्ण रचनाकार हैं। सूफी काव्यधारा में इन कवियों ने प्रेम को साधना का मार्ग बताया है। इस धारा के साधक परमात्मा को पत्नी एवं आत्मा को पति के रूप में स्वीकार करते हैं। सूफी साधक ईश्वर के साथ भय का नहीं, बल्कि प्रेम का सम्बन्ध स्थापित करते हैं। इश्क-ए-मजाजी से इश्क-ए-हकीकी की यात्रा में विश्वास रखते हैं। इनके यहाँ प्रेम तत्त्व सर्वोपरि है।

सूफी साधकों का प्रेम 'प्रच्छन्न' के प्रति है। सूफियों ने अपने प्रबन्ध काव्यों में जिस प्रेम का परिचय दिया है, वह पूर्ण रूप से अलौकिक होते हुए भी लौकिक था। सूफी अपनी प्रेम व्यंजना साधारण नायक-नायिका के रूप में करते हैं। प्रसंग सामान्य प्रेम का ही रहता है, किन्तु उसका संकेत 'परम प्रेम' का होता है। सूफी साहित्य में लौकिक और अलौकिक प्रेम दोनों साथ-साथ चलते हैं। प्रस्तुत में अप्रस्तुत की योजना होती है। सूफी प्रबन्ध साहित्य में लौकिक पात्रों के मध्य लौकिक प्रेम की व्यंजना करते हुए भी अलौकिक की स्थापना करने का दुरुह प्रयास किया गया है।

प्रेम का आदर्श पक्ष वह है, जिसका प्रस्फुटन विवाह के पश्चात होता है। इसका विकास जीवन-क्रम के साथ होता चलता है। जीवन की गहन और विषम परिस्थितियों में भी प्रेम की गम्भीरता तथा गूढ़ता बढ़ती ही जाती है। इस प्रेम में एकनिष्ठता की भावना के साथ ही कर्तव्य की दृढ़ भावना का भी समन्वय रहता है। प्रेम न तो मात्र वासना-तृप्ति का ही साधन है और न कर्तव्य की कसौटी। कर्तव्य और भावना का सहर्ष समन्वय ही प्रेम है।

प्रेम का एक अन्य पक्ष गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन या साक्षात् दर्शन से प्रारम्भ होता है। इस प्रकार के प्रेम में नर और नारी मिलन का प्रयास करते हैं और अधिकांश अवसरों पर उनका मिलन हो भी जाता है। सूफी साहित्य में इस प्रकार के प्रेम की प्रधानता है। इसमें प्रेम की गम्भीरता एवं शुचिता का अभाव नहीं होता, किन्तु इसकी अपेक्षा विवाह के पश्चात होने वाले प्रेम में कर्तव्यनिष्ठा अधिक मिलती है। प्रेम के इस स्वरूप का परिचय सूफी प्रेमकथाओं में मिलता है। लगभग सभी नायक-नायिकाएँ, जो परमात्मा का स्वरूप हैं, रूप-गुण-श्रवण सुनकर अथवा स्वप्न में या साक्षात् देखकर उसके विरह में व्याकुल हो जाते हैं और घर-परिवार त्याग कर योगी बन जाते हैं। गुण-श्रवण के द्वारा प्रेम-भावना जाग्रत होने वाली कथाओं के अन्तर्गत पद्मावत, हंसजवाहिर, अनुराग बाँसुरी आदि कथाएँ आती हैं। 'छीता' प्रेमाख्यान में गुण-श्रवण से आकर्षण एवं इसके पश्चात साक्षात् दर्शन से प्रेम जागृत होता है। चित्र-दर्शन से प्रेमोद्भूत होने वाली कथाओं में चित्रावली, रतनावती आदि कथाएँ आती हैं। स्वप्न-दर्शन के द्वारा प्रेम जाग्रत होने वाली कथाएँ अधिक हैं। कनकावती, कामलता, इन्द्रावती, प्रेमदर्पण आदि प्रेमाख्यान इसके अन्तर्गत आते हैं। साक्षात् दर्शन द्वारा प्रेम-जागृति का वर्णन मधुमालती, मधुकर-मालती एवं प्रेमरस आदि में मिलता है।

सूफी साहित्य में प्रेम और रूप का चिर सम्बन्ध दिखाया गया है। वह परमात्मा सौन्दर्यमय है। उसका रूप इस जगत में व्याप्त है। रूप स्वयं प्रेम को आकर्षित कर लेता है। 'प्रेमरस' के रचयिता 'शेख रहीम' ने इसे सिद्ध भी कर दिया है। 'मुल्तान अविद' ने युद्ध में प्रेमसेन को मृत्यु के घाट उतारकर जब महल में प्रवेश किया, तो वह 'चन्द्रकला' का सौन्दर्य देखकर मंत्रमुग्ध हो गया और उसने सोचा कि जब यह मनुष्य इतना अधिक सुन्दर है, जो परमात्मा का केवल प्रतिबिम्ब मात्र है, तो वह जो सबका रचयिता है, वह कितना सुन्दर होगा। इसी भावना से व्याकुल होकर 'मुल्तान अविद' परम रूप का वियोगी, प्रेमी होकर चल पड़ा। इस सृष्टि का कारण 'प्रेम' है। प्रेम के वशीभूत होकर परमसत्ता ने सृष्टि की रचना की। प्रेम और रूप का अनन्य सम्बन्ध है। जिस प्रकार रूप से प्रेम को प्रेरणा मिलती है, उसी प्रकार रूप और प्रेम के उद्भूत हो जाने पर विरह का अनुभव होना स्वाभाविक है। कवि उसमान इन्हीं तत्त्वों को सृष्टि का मूल मानते हैं-

“आदि प्रेम विधि ने उपराजा, प्रेमहि लाल जगत सब साजा।

प्रेम किरन ससि रूप जेऊँ, पानि प्रेम जिमि हेम, हि विधि जहं जहं जानियहु, जहां रूप तहं प्रेम।”¹

सूफी साधकों ने प्रिय के सौन्दर्यमय रूप की कल्पना 'मधुबाला' या 'साकी' के रूप में की है, जो अपने रूप की मदिरा से जगत में प्रेम उकसाती है। उसके रूप-सौन्दर्य का पान करके प्राणी सुध-बुध खोकर 'बावला' या 'मतवाला' हो जाता है। इसी तथ्य को कवि इस प्रकार व्यक्त करता है कि उस सुन्दरी बाला के हाथ में सुराही एवं प्याला है। वह तुम्हें मदपान कराके सारी चिन्ताओं से मुक्त करके मतवाला बना देगी-

“है घन हाथ सुराही प्याला,

द्वै मद तुम्हें करें मतवाला।”²

इस जीवन में उसकी रूप-माधुरी का पान किए बिना जीवन व्यर्थ है। सूफी कवि कासिमशाह ने ‘हंसजवाहिर’ में परम सौन्दर्यशाली परमात्मा को प्रेम का आलम्बन बताया है और जीवात्मा को आश्रय। जीवात्मा परमात्मा से बिछुड़कर सदैव दुःखी रहा करती है। पहले जीवात्मा और परमात्मा में भेद न था, किन्तु जगत में उत्पन्न होकर दोनों में बिछोह हो गया। यही कारण है कि उसे परमात्मा के सौन्दर्य का आभास मात्र होते ही उसके सुप्त प्रेम की चिंगारी यदि हृदय में सुलग गई, तो बुद्धि और तर्क नष्ट हो जाता है। प्रेम की अग्नि सुलगते ही सारे संशय, तर्क और जिज्ञासा शान्त हो जाती है, प्रेम मार्ग प्रशस्त हो जाता है-

“भुला सबै जगत का धन्धा,

पड़ा जो आन प्रेम का फन्द।”³

प्रेम जिस प्रकार बरबस उत्पन्न होता है, उसी प्रकार सच्चे प्रेम की लगन भी बरबस बढ़ती जाती है। प्रेम की निश्चयात्मकता के कारण प्रिय-प्राप्ति की दुरुहता, प्रयास के कष्ट, त्याग एवं आपा मिटाने की भावना दृढ़ होती जाती है। प्रेमी का साध्य केवल प्रिय-प्राप्ति होता है। वह किसी वस्तु की आकांक्षा नहीं करता, यही कारण है कि जीवन के सुख-ऐश्वर्यों का लोभ उपस्थित होने पर वह पथ-विचलित नहीं होता। राजकुंवर ‘इन्द्रावती’ में इसी प्रकार अपने प्रेम की एकाग्रता का परिचय देता है- “जिसके प्रेम ने मुझे बावला बना दिया है, जिसने मुझे सुख-ऐश्वर्य से विमुक्त कर दिया है, उसके अतिरिक्त और किसी वस्तु से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं।”⁴ पद्मावत में ऐसी ही निष्काम भावना का अनुभव करके राजा रत्नसेन समुद्र के बीच में भी मग्न हो रहा था।

नूरमुहम्मद ने ‘इन्द्रावती’ में प्रेमानुभूति को आनन्ददायक बताया है, लेकिन उन्होंने विरहानुभूति के कष्टों का भी वर्णन किया है। कवि के अनुसार सच्चा प्रेम एक बार उत्पन्न होकर निरन्तर बढ़ता जाता है। आरम्भ में प्रेमानुभूति आनन्ददायक होती है, किन्तु विरह होते ही जिन कष्टों का सामना करना पड़ता है, वे प्रेम मार्ग को अत्यन्त दुरूह बना देते हैं। प्रेम मार्ग की दुरुहता उसकी गति अवरुद्ध करने में असमर्थ होती है। तीन सौ सत्तर मन सिर पर बोझ रखकर एक पैर से चलना जितना कठिन है, उतना ही कठिन प्रेम मार्ग पर अग्रसर होना है-

“सत्तर सिर मन तीन सै, पांव एक सों जाहि,

प्रेमी को दुख देव सो, प्रेम पन्थ यह आहि।”⁵

प्रेम मार्ग के पथिक को जीवन का मोह भी विचलित नहीं कर सकता। ‘इन्द्रावती’ को प्राप्त करने के लिए पहले समुद्र से प्रणामोती निकालना आवश्यक था, जिसके प्रयास में बहुत से व्यक्तियों ने प्राण गंवा दिए थे। अतः लोगों ने ‘इन्द्रावती’ के सिर पाप का बोझ रखकर कार्य की दुरुहता समझाने का प्रयास किया, तो साधक राजकुंवर का उत्तर था कि यह सब दोष साधक की अयोग्यता का है। जो कोई भी प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है, वह अपने पृथक अस्तित्व एवं अहंत्व की चाह नहीं रखता। उसका एक मात्र लक्ष्य ‘मरण’ या ‘नफ्स’ का नाश होता है।

सूफी कवि नूरमुहम्मद ने ‘अनुराग बांसुरी’ में भावनाओं के परिष्कार की बात की है कि अहं के अतिरिक्त, प्रिय की महानता साधक को प्रेम मार्ग से यदा-कदा विरत करती है। लोक-दृष्टि भी राजा-रंक के प्रेम सम्बन्ध की अवहेलना करती है। किन्तु साधक ऐसी शंका का निवारण कर लेता है। उत्तम का ध्यान करने से मनुष्य की भावनाएँ उच्च होती हैं। निम्नतम भावनाओं का भी आलम्बन महान होने पर उन भावनाओं का परिष्कार होता है-

“कहा कुंवर उत्तम के नेहा, दाऊ जगत लहै यह देहा।

उत्तम ध्यान धरै मन दर्पन, निर्मल होई विलोकै दरसन।”⁶

सूफी साधक प्रेम को सब कुछ मानकर अन्य भावों की उपेक्षा करते हैं। वे भली-भाँति जानते हैं कि प्रेम सब रसों का मूल है। इश्क या प्रेम ही इस जगत का सार है। प्रेम के उत्पन्न हो जाने पर संसार का सारा ज्ञान उसके सम्मुख तुच्छ हो जाता है। जब जीव का गुरु प्रेम हो जाता है, प्रेम के ज्ञान से चित्त में जो प्रकाश होता है, उसके सम्मुख जगत-ज्ञान तुच्छ है। यह सारा संसार प्रीति एवं दया के वशीभूत है। प्रीति के फन्दे ने सारे संसार को फँसा रखा है। नूरमुहम्मद की भाँति शेख रहीम भी प्रेम और दया को कर्मकाण्ड और ज्ञान से श्रेष्ठ समझते हैं। यदि दया और प्रेम का स्थान हृदय में नहीं है, तो हृदय कंकड़ के समान मूल्यहीन है। जब दया, प्रेम का निवास हृदय में हो जाता है, तो वहाँ अन्तर्यामी की प्रतिष्ठा स्वयं हो जाती है। हृदय काबा एवं कैलाश के समान पवित्र हो जाता है-

“दया प्रेम जेहि हिय बसे, सो काबा कैलास।

अन्तरजामी आप रब, करे हिउँ पर बास।”⁷

सूफी सदैव हृदय-शुद्धि का ध्यान रखते हैं और भावना को तर्क की अपेक्षा श्रेष्ठ समझते हैं। वे सारे कर्मकाण्ड, कर्तव्य, भावना या बुद्धि-विलास को त्यागकर हृदय में निरन्तर उसका ध्यान किया करते हैं। हृदय में बसी मूर्ति को भी ये कण-कण में व्याप्त देखते हैं। हृदय और नैनों की मूर्ति में कोई अन्तर नहीं होता-

“जब एक मूर्ति हिए समाली, दूसर कहाँ बिलौके ज्ञानी।”⁸

सूफियों का विश्वास है कि प्रेम का मार्ग सत्य का मार्ग है। प्रेम का आविर्भाव प्रत्येक हृदय में नहीं होता। वह हृदय धन्य है जिसमें प्रेम की चिंगारी सुलगती है। प्रेम-ज्ञान किसी सौभाग्यशाली के हृदय में ही जाग्रत होता है-

“सरग बूंद सब हांहि न मोती,

सब घट विरह दई नहिं जोती।”⁹

सूफी साहित्य में विरह का बड़ा महत्व है। प्रेम की भाँति सूफी विरह को भी मूल पदार्थ मानते हैं। विरह के कारण ही प्रेम का अस्तित्व है। विरह ही प्रेम का सार है। प्रेम तीव्र, गम्भीर एवं अहेतुक होने के साथ ही त्याग एवं समर्पण की भावना से युक्त होता है। जो प्रेम के मार्ग में प्राणों का भी त्याग कर सके, वही सच्चा प्रेमी है। कवि मंझन भी स्वीकार करते हैं कि जिस व्यक्ति में अपना सीस उतारकर हाथ में लेने की सामर्थ्य हो, वही इस मार्ग पर अग्रसर हो सकता है। प्रेम और रूप का चिर सम्बन्ध है। सूफी प्रेम कथाओं में प्रेम का आविर्भाव रूप-दर्शन या गुण-श्रवण से हुआ है। रूप और प्रेम के इस अविच्छिन्न सम्बन्ध का भी एक रहस्य है। मनुष्य, जिसे इन कवियों ने सौन्दर्य का आधार माना है, वह ईश्वर की प्रतिछवि है-

“देखो निरख परख मोहि काया, मैं कत अहो अहो वह छाया।”¹⁰

परम सौन्दर्यशाली परमात्मा के सौन्दर्य पर मोहित हो जाना, कर्ता के अनिर्वचनीय रूप के बलिहारी जाना है। यही कारण है कि सूफी साधक इश्क-मजाजी की अवहेलना नहीं करते। लोकप्रेम उपेक्षणीय नहीं है, बल्कि लौकिकता एवं सांसारिकता त्याज्य है। कवि नसीर कृत ‘प्रेमदर्पण’ में युसूफ के द्वितीय सौन्दर्य को देखकर सौदागर की पुत्री में स्वभावतः उसके रचयिता का परिचय पाने की जिज्ञासा जाग उठी थी-

“अचरज रूप अति तोर मनोहर, देखत के जिया जाय।

कौन है इहकर सिरजनहारा, दियो न मोहि बताय।”¹¹

इस जिज्ञासा की शान्ति शेख रहीम ने बड़ी सफलता से की है कि जिस प्रकार मूर्ति की सुन्दरता कलाकार की कुशलता का परिचय देती है, उसी प्रकार ‘मानव सौन्दर्य’ परमेश्वर के अनन्त सौन्दर्य का परिचय देता है। निष्कर्ष यह है कि इस सुन्दर सृष्टि का निर्माणकर्ता परमेश्वर अद्वितीय है। सौन्दर्य, शक्ति एवं शील में उसका कोई उपमान नहीं। इस प्रकार सूफियों का प्रेम परमप्रेम-प्राप्ति का सोपान है।

सूफी साहित्यकारों ने लौकिक प्रेम में भी अलौकिकत्व का समावेश किया है। भावनाओं का उच्च आधार या आलम्बन ही भावनाओं को उच्च एवं महान बनाता है। हृदय की इच्छाओं एवं भावनाओं को परमतत्त्व को समर्पित कर देने से ही उनका परिमार्जन और उन्नयन हो जाता है। कवि नूरमुहम्मद ने इस तथ्य की व्याख्या की है- राजकुंवर चेता माजिन से कहता है कि मैं जोगी हूँ, किन्तु प्रेम-पन्थ का जोगी होने के कारण उत्तम की ही भीख ग्रहण करता हूँ। सत्य है, जिसके हृदय में महान व्यक्ति का प्रेम है, वही व्यक्ति ऊँचा है। जो नीचों से स्नेह करता है, वही नीच है।¹²

सूफी प्रेमाख्यानों में प्रेम लौकिक पक्ष से अलौकिक की ओर अग्रसर होता है। सूफी साधक जगत के सारभूत सत्य ‘परमसत्ता’ को ससीम एवं अससीम दोनों मानता है। जीव, जो ससीम एवं न्यूनतम गुणों से युक्त है, परमात्मा को उपलब्ध करना चाहता है। इसी प्रेम के स्वरूप को व्यक्त करने के लिए सूफियों ने परमसत्ता को कण-कण में व्याप्त दिखाया है। उन्होंने लौकिक प्रेम में अलौकिकत्व की प्रतिष्ठा की है तथा मानवीय प्रेम का आध्यात्मिकरण किया है। सूफी काव्य में मानवीय प्रेम की प्रतिष्ठा आध्यात्मिक प्रेम के सोपान रूप में मिलती है।

सूफी सिद्धान्त के अनुसार, जीव और परमात्मा में पारमार्थिक अन्तर नहीं है। परमात्मा और जीव का सम्बन्ध अति प्राचीन है। कवि ‘मंझन’ जीव और परमात्मा के इस प्रेम सम्बन्ध को स्पष्ट स्वीकार करते हैं। वे मानते हैं कि आत्मा और परमात्मा, पृथ्वी और गगन पहले एक थे, तभी विलग होने के बाद से जगत का कण-कण उससे मिलने को आतुर है। सारा संसार उसके विरह से पीड़ित है-

“धरती गगन मिले हुत दोऊ, केइ निनार के दीन्ह बिछोह।”¹³

सूफी कवियों के अनुसार, जीवन में प्रेम की व्याप्ति ही आनन्द है। जगत की सृष्टि प्रेम के कारण ही हुई। प्रिय-प्राप्ति की कठिनता के कारण सूफी प्रेम में भी परकीय प्रेम की भाँति तीव्रता एवं व्यग्रता होती है। सगुण और निर्गुणोपासकों की भाँति वह परमात्मा को व्यक्त भी मानता है और अव्यक्त भी। सूफियों का ‘कल्ब’ केवल भावनाओं का ही संस्थान नहीं, प्रत्युत ज्ञान और भाव-चित्र भी इसी में अंकित होते हैं। सूफी साधकों का प्रेम ऐकान्तिक और भाव-विह्वल है। सूफी प्रेम और दया को आवश्यक समझते हैं। शेख रहीम का कथन है कि किसी भी धार्मिक सम्प्रदाय का अनुयायी हो, उसे दया-धर्म नहीं छोड़ना चाहिए-

“सबसे कहीं दोउ कर जोरे, क्षमा कियो सब औगुन मोरे।

तजो न दया धरम तुम, चाहै जो मत होय।”¹⁴

क्योंकि जिस मत में दया-धर्म होता है, वहीं परमेश्वर निवास करता है। एक अज्ञात कवि ने अपने खड़ी बोली प्रेमाख्यान ‘कामरूप की कथा’ में इश्क की नदी को सदैव उबलते देखने की चाह की है। सूफी प्रेम का विवेचन करते हुए फरीदुद्दीन अत्तार ने कहा है- “प्रेमिका का प्रेम अग्नि है और बुद्धि केवल धुआँ। जैसे ही प्रेम प्रज्वलित हो उठता है, धुआँ विलीन हो जाता है”-

“इश्के जानां आतशतां अक्ल दूद,

सूफी साहित्य में प्रेम के बहुप्रयुक्त रूपकों में चकोर और चन्द्रमा, कमल और सूर्य, राग और हिरण मुख्य हैं। इन रूपकों से प्रेम के भिन्न गुणों एवं स्वरूपों का परिचय मिलता है। चकोर और चन्द्र, कमल और सूर्य के रूपक स्पष्ट करते हैं कि काल, स्थान एवं स्तर का अन्तर प्रेम में मान्य नहीं है। राग और हिरण का रूपक तन्मयता, तल्लीनता तथा समर्पण का आदर्श है। सूफियों ने अपने ग्रन्थों की रचना हिन्दी भाषा और फारसी लिपि में की। इनके प्रेमाख्यानों पर भारतीय प्रेमाख्यान परम्परा एवं फारसी की मसनवी काव्य-शैली का प्रभाव है।

सूफी साहित्य में प्रेम के शुद्ध स्वच्छन्दतापूर्ण दृष्टिकोण, सौन्दर्य-भावना, साहसपूर्ण क्रिया-कलाप एवं समाज-विमुख प्रणय-भावना का चित्रण हुआ है। इसलिए सूफी साहित्य की विशिष्टता को प्रारम्भ में फारसी प्रभाव या सूफी प्रभाव की देन कहते हुए अभातीय कहा गया। लेकिन आगे चलकर यह माना गया कि स्वच्छन्दता, सौन्दर्य, साहस, कल्पना आदि से मिश्रित प्रणय-भावना किसी भाषा विशेष, देश विशेष या सम्प्रदाय विशेष की विशेषता न होकर एक ऐसी सार्वजनिक प्रवृत्ति है, जो हर भाषा और हर देश के साहित्य में समय-समय पर अभिव्यक्त होती रही है। इस प्रवृत्ति को विश्व साहित्य में ‘रोमांस’ अर्थात् ‘स्वच्छन्द प्रेम’ कहा गया है।

निष्कर्ष-

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि सूफी प्रेमाख्यानों में प्रेम की गति विषम से सम की ओर है। प्रेम की स्थापना साध्य के रूप में न होकर साधन के रूप में है। सूफी साधक, एक ओर जहाँ प्रेम की एकनिष्ठता और हृदय की शुद्धि पर विश्वास करता है, वहीं वह प्रिय और उसके प्रेम को प्राप्त करने के लिए जिक्र, फिक्र, नमाज, जियारत, हज्ज, जकात, सौम, रोज़ा आदि ऐसी क्रियाओं में भी विश्वास करता है। हृदय की शुद्धि, शारीरिक कष्ट, साधना और शरीरगत के नियमों का समन्वय ही सूफी प्रेम-साधना का स्वरूप है, जिसके मूल में उदारता एवं हृदय की स्वच्छता विद्यमान है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. उसमान, चित्रावली, पृ. 13
2. नूरमुहम्मद, इन्द्रावती, पृ. 78
3. कासिमशाह, हंसजवाहिर, पृ. 72
4. नूरमुहम्मद, इन्द्रावती, पृ. 83
5. नूरमुहम्मद, इन्द्रावती, पृ. 44
6. नूरमुहम्मद, अनुराग बाँसुरी, पृ. 168
7. शेख रहीम, प्रेमरस, पृ. 117
8. नूरमुहम्मद, अनुराग बाँसुरी, पृ. 134
9. मंज़न, मधुमालती, पृ. 96
10. कासिमशाह, हंसजवाहिर, पृ. 154
11. नसीर, प्रेमदर्पण, पृ. 52
12. नूरमुहम्मद, इन्द्रावती, पृ. 44
13. जायसी, पञ्चावत, पृ. 44
14. शेख रहीम, भाषा प्रेमरस, पृ. 60
15. ईरान के सूफी कवि, पृ. 170